एग्री आर्टिकल्स
(कृषि लेखों के लिए ई-पत्रिका)
वर्ष: 03, अंक: 05 (सितम्बर-अक्टूबर, 2023)
www.agriarticles.com पर ऑनलाइन उपलब्ध
© एग्री आर्टिकल्स, आई. एस. एस. एन.: 2582-9882

बेर-व्यावसायिक खेती व प्रबंधन

(*डॉ. शत्रुंजय यादव[1] एवं सुधीर कुमार यादव[2])
[1]सहायक प्राध्यापक, अग्रवन हेरिटेज विश्वविद्यालय, आगरा
[2]शोध छात्र, बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ
*संवादी लेखक का ईमेल पता: sattu0064@gmail.com

बेर भारत में पैदा होने वाले प्राचीन फलों में से एक है। यह सस्ता एवं लोकप्रिय फल होने के कारण इसे गरीबों की मेवा भी कहा जाता है। इसमें ग्रीष्मकालीन सुसप्तावस्था के कारण वर्षा के बाद पुष्पन एवं फलन शुरू होता हैं इसलिए रेगिस्तानी फलों का राजा भी कहते हैं। बेर के फलों को मुख्यतः ताजे रूप में प्रयोग करने के साथ–साथ इसके फलों से कैंडी, स्क्वैश, बटर आदि भी बनाये जाते हैं। बेर में कार्बोहाइड्रेट, विटामिन तथा खनिज लवण प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। इसके फल रक्त साफ करने एवं दस्त रोकने हेतु उपयोगी होते हैं। ऊसर, बंजर एवं कम वर्षा वाले क्षेत्रों के लिए बेर उपयुक्त फल है।

वितरणः बेर की उत्पत्ति भारत में हुई है और वर्तमान में बेर की खेती भारत के अलावा चीन, अफगानिस्तान, ईरान, सीरिया, म्यांमार, मलेशिया, आस्ट्रेलिया, फ्रांस, तथा संयुक्त राज्य अमेरिका सहित कई देशों में की जाती है तथा भारत में इसकी खेती मुख्य रूप से राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, उत्तर प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र, आन्ध्रप्रदेश, पश्चिम बंगाल आदि राज्यों में की जाती है।

वानस्पतिक वितरणः

जिजिफस वंश के अन्तर्गत लगभग 40 प्रजातियां पाई जाती है। जिसमें मुख्यतः बेर को जिजिफस मारीशियाना एवं चायनीज बेर (जिजिफस जुजुवा) में वर्गीकृत किया गया है। चायनीज बेर का वृक्ष आकार में कुछ छोटा (लगभग 6–8 मीटर ऊँचा) एवं सीधा बढ़ने वाला होता है। जाड़े में सुसुप्तावस्था में रहने के कारण इस पर पाले का प्रभाव कम पड़ता है तथा इसके विपरीत भारतीय बेर का वृक्ष अधिक फैलने वाला होता है। इसकी शाखायें कुछ लताओं की तरह बढ़ती हैं। इसमें पतझड़ ग्रीष्म ऋतु में होता है।

किस्में:–

नरेन्द्र बेर सेलेक्सन –1 – यह आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज अयोध्या से विकसित की गई है।

- वृक्ष ओजस्वी एवं फैलावदार।
- इसका लम्बा, गोल, सतह चिकनी, रंग पीला हरा होता है तथा यह देर से पकने वाली किस्म है और फलोत्पादन 90–100 किलो ग्राम प्रति पेड़।

नरेन्द्र बेर सेलेक्सन–2 –

- वृक्ष ओजस्वी एवं फैलावदार।
- इसका फल का आकार बड़ा सतह चिकनी रंग पीला–हरा तथा यह देर से पकने वाली किस्म है और फलोत्पादन 80–90 किलोग्राम प्रति पेड़।

देश के विभिन्न भागों में बेर की अनेक लोकप्रिय किस्में हैं जैसे–

उत्तर प्रदेश – बनारसी कड़ाका, बनारसी पैबन्दी, जोगिया, पोंडा एवं अलीगंज।
बिहार – बनारसी, नागपुरी तथा बेर पेकाटा।

हरियाणा एवं पंजाब – गोला, कैथली, दंज, चोंचल पोंडा एवं सानौर–2।
राजस्थान – गोला, सेव, मुड़िया एवं जोगिया।
महाराष्ट्र – गोला, कैथली, महरून, उमरान आदि।
गुजरात – गोला, कैथली, अजमेरी, चमेली आदि।
पश्चिम बंगाल – नारकेली, बनारसी, प्रोलिफिक एवं बरईपुर।

इनके अतिरिक्त अनेक अन्य किस्में जैसे– नाजुक, सानौर–1, 4 और 5, बादशाह पसन्द, सुरती, छुहारा, इलायची, जेड जी–2, जेड जी–5, जेड जी–3, गोरवी आदि भी देश के विभिन्न भागों में प्रचलित हैं।

मुख्य किस्मों की विशेषतायें–

गोला– यह एक अगेती किस्म है। इसके फल लगभग गोल, निचला सिरा कुछ चपटा, चमकीले पीले रंग के तथा सफेद गूदे वाले होते हैं। और फलों में कुल घुलनशील ठोस पदार्थ 17–18 प्रतिशत तक पाये जाते हैं। यह लवणीय मृदाओं के लिये सहनशील है।

कैथली–यह कैथल (हरियाणा) से चयन विधि से विकसित की गई है और इसके फल आकार में बड़े होते हैं जिनका गूदा मुलायम होता है। और 14–16 प्रतिशत तक कुल घुलशील ठोस पदार्थ पाये जाते हैं। उपज लगभग 120 कि०ग्रा०/वृक्ष होती है। इसके फल मध्य मार्च से अप्रैल के प्रारम्भ में पकते हैं।

बनारसी कड़ाका: यह उत्तर प्रदेश में उगाई जाने वाली प्रमुख किस्म है। फल का रंग पीला, सिरा, हल्का नुकीला होता है। और इसके गूदे का रंग सफेद मीठा तथा कुल घुलनशील ठोस पदार्थ लगभग 17 प्रतिशत तक होते हैं।

सेब: यह सेब के आकार की और देर से तैयार होने वाली किस्म है और इसका गूदा हल्का क्रीम रंग का एवं काफी मीठा होता है। और इसके कुल घुलनशील ठोस पदार्थ लगभग 19 प्रतिशत तक होते हैं।

उमरान: यह देर से पकने वाली किस्म है। इसके फल बड़े आकार के होते हैं। फलों में कुल घुलनशील ठोस पदार्थ की मात्रा 18–19 प्रतिशत तक होती है। इसके फलों की भण्डारण क्षमता अधिक होती है। इस किस्म की उपज 175–200 कि०ग्रा०/वृक्ष तक हो जाती है।

सनौर–2: इसके फल जल्दी पकने वाली किस्म है और इसके फलों में कुल घुलनशील ठोस पदार्थ 19–20 प्रतिशत तक होते हैं तथा विटामिन–सी की मात्रा 80 मि०ग्रा०/100 ग्राम खाद्य पदार्थ में पायी जाती है। हाल ही में गोधरा (गुजरात) से गोमाकीर्ती तथा केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर से थार सेविका तथा थार भुवराज किस्में विकसित की गयी हैं जो लगभग 70 कुन्तल/हे० तक उपज देती है तथा यह सफेद चूर्ण फफूंद के लिए मानक हैं।

जलवायु:

बेर को विभिन्न प्रकार की जलवायु में उगाया जा सकता है किन्तु शुष्क व गर्मी जलवायु बेर के लिए अधिक उपयुक्त है जिसके कारण इसके फल अधिक स्वादिष्ट और उच्च गुणवत्तायुक्त होते हैं। पौधों की पत्तियां गर्मी में झड़ जाती है। अतः यह सूखे को भलीभांति सहन करने के सक्षम है तथा इसमें फूल खिलने एवं फल बनने के समय अधिक आर्द्रता फलन के प्रतिकूल होती है। समुद्र तल से 900–1000 मीटर ऊँचाई तक इसकी अच्छी पैदावार ली जा सकती है।

भूमि:

बेर लवणीय मृदा सहनशील होने के कारण यह विभिन्न प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है परन्तु गहरी बलुई दोमट भूमि जो हल्की क्षारीय हो इसकी बागवानी के लिये सर्वोत्तम होती है। पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना के अनुसंधानों के अनुसार बेर को 9.2 पी–एच मान तक की मृदाओं में उगाया जा सकता है।

प्रसारण विधि:

भारत में अधिकांश बेर के पेड़ बीज द्वारा तैयार किये जाते हैं, परन्तु ऐसे पेड़ों से पैदावार कम तथा फलों की गुणवत्ता बहुत खराब होती है। इसलिये इसका वानस्पतिक विधियों से करते हैं। वानस्पतिक विधियों में ढाल तथा छल्ला चश्मा विधि बेर के लिए व्यावसायिक विधि है, जोकि काफी प्रचलित है।

उत्तर भारत में जिजिफस मारीशियाना के जंगली पेंड़ों से गुठलियां लेकर मूलवृन्त हेतु पौधे तैयार किये जाते हैं। बेर के जंगली जातियों जैसे जिजिफस रूगोसा, जिजिफस ओइनोप्लिया अथवा

जिजिफस रोटन्डीफोलिया के पौधे भी मूलवृन्त के उद्देश्य से लगाये जा सकते हैं। फलों से गुठली निकालने के बाद उन्हें उकत्र कर बोया जाता है। बीज कठोर होने के कारण देर से जमते हैं अतः बीज को 500 पी पी एम जिब्रेलिक अम्ल के घोल में 24 घंटे या सान्द्र गंधक अम्ल में 6 घंटे डुबाकर बोने से अंकुरण शीघ्रता से होता है। बीजों के कठोर आवरण को तोड़कर बोने से वे एक सप्ताह में अंकुरित हो जाते हैं और यदि तोड़ा न जाये तो एक माह का समय लग जाते हैं।

वानस्पतिक विधि में पहले बीजों को मार्च–अप्रैल में नर्सरी में 30 से.मी. की दूरी पर 2 से.मी. गहरा बोते हैं तथा सिंचित क्षेत्रों में इसे जुलाई–अगस्त के मध्य उद्यान में एक निर्धारित स्थान पर लगाते हैं तथा वहां पर उनका कलिकायन कर देते हैं या नर्सरी में ही कलिकायन कर जनवरी में नंगी जड़ों के साथ रोपण करते हैं। केवल वर्षा पर आधारित क्षेत्रों में बीज 300 गेज की पालीथीन नलिका (25 से. मी लम्बी व 10 से.मी. व्यास) में अप्रैल में बोते हैं। और इस पौधों पर जुलाई में कलिकायन करते हैं तथा जब मूलवृन्त के तने की मोटाई पेन्सिल के बराबर हो जाने पर यह पौधा कलिकायन के योग्य उपयुक्त माना जाता है। बेर में ढाल कलिकायन (Patch budding) और छल्ला कलिकायन(रिंग बडिंग) दोनों ही व्यवसायिक रूप से की जाती है। कलिकायन के लिये जून से लेकर अगस्त तक का समय उपयुक्त होता है।

पौध रोपणः

रोपण हेतु सर्वप्रथम खेत में 8×8 मीटर की दूरी पर 1×1×1 मीटर आकार के गड्ढे मई–जून में तैयार कर लेते हैं। गड्ढों में 20 कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद, 1 कि.ग्रा. कैल्शियम अमोनियम नाईट्रेट तथा 1 कि.ग्रा. सुपर फास्फेट मिलाकर भर देते हैं। पौधों को दीमक से बचाव के लिए 50 ग्राम क्यूनालफास धूल प्रति गड्ढा के दर से भरते समय डालते हैं। पौध रोपण का कार्य वर्षा शुरू होते ही जुलाई–अगस्त में किया जाता है। सिंचाई की समुचित सुविधा होने पर पौध रोपण का कार्य फरवरी–मार्च में भी किया जा सकता है।

पोषणः

बेर आसानी से अनुपजाऊ भूमि में सफलतापूर्वक तैयार होने वाला वृक्ष है, परन्तु अच्छी वानस्पतिक वृद्धि एवं पैदावार के लिये इसमें खाद एवं उर्वरक का प्रयोग करते हैं। और पोषक तत्वों की मात्रा भूमि की किस्म एवं उर्वरता, पेड़ की उम्र तथा सिंचाई की उपलब्धता पर निर्भर करती है।

उर्वरकों को दो बराबर भागों में बांटकर आधी मात्रा जून में तथा शेष आधी मात्रा सितम्बर–अक्टूबर में देते हैं। खाद देने के बाद सिंचाई करना आवश्यक होता है। इसके अतिरिक्त यूरिया 1.0 प्रतिशत, जिंक सल्फेट 0.4 प्रतिशत, फेरस सल्फेट 0.4 प्रतिशत के पर्णीय छिड़काव से अच्छी उपज प्राप्त होती है।

सिंचाईः

नये पौधों को पानी की अधिक आवश्यकता होती है। जाड़े के मौसम में 15–20 दिन के अन्तर पर तथा गर्मी में 8–10 दिन के अन्तर पर सिंचाई करना आवश्यक रहता है। शुरू के 3 साल तक सिंचाई की आवश्यकता कम होती है और काट–छांट के बाद तथा जब फल लग जाते हैं तब पौधों की सिंचाई करना अतिआवश्यक होता है, जिससे फलों का गिरना कम हो जाता है तथा फलों का आकार बढ़ जाने से उपज भी बढ़ जाती है। पौधों के थाले के चारों तरफ घास–फूस की पलवार बिछा देने से नमी संरक्षित रहती है तथा खरपतवार कम उगते हैं।

निराई–गुड़ाईः

पौधों की अच्छी बढ़वार एवं मृदा के अधिकतम उपभोग लिये पौधों के आस–पास के खरपतवार समय–समय पर निकालते रहते हैं और जब पौधे बड़े हो जाते हैं तो थाले की निराई–गुड़ाई करके उसे साफ रखते हैं या पूरे बाग में 2–3 जुताइयां प्रति वर्ष करते हैं। बाग में ग्लाइफोसेट के 4 कि.ग्रा. /हेक्टेयर सक्रिय पदार्थ से छिड़काव कर खरपतवारों की संख्या में कमी की जा सकती है।

अन्तराशस्यः

बाग लगाने के प्रारम्भिक 3–4 वर्षों तक पौधों के बीच के खाली स्थान का उपयोग, मौसमी सब्जियां उगाकर आय का उत्पादन किया जा सकता है। जिसमें टमाटर, मिर्च, फूलगोभी, पत्तागोभी, पालक आदि अन्तराशस्यन हेतु उपयुक्त सब्जियां हैं। जहां भूमि कटाव की समस्या हो उन स्थानों पर ग्वार, मूंग तथा उर्द जैसी फसलें आदि उगाते हैं।

काट–छांट:

बेर के पेड़ों को उचित ढांचा प्रदान करने एवं अच्छे किस्म से अधिक फल लेने के लिये काट–छांट अतिआश्यकत है क्योंकि फूल और फल नई शाखाओं पर ही आते हैं अतः काट–छांट और भी आवश्यक हो जाती है। बेर में कटाई–छंटाई करने का सबसे उपयुक्त समय अप्रैल–मई माह होता है, क्योंकि इस समय पौधे सुसुप्तावस्था में रहते हैं जिससे उनके कोशा–रस को नुकसान नहीं होता है। पुरानी शाखाओं का लगभग 50–60 प्रतिशत भाग काट देते हैं तथा कटे भाग पर ब्लू कापर या ब्लाइटाक्स–50 का लेप लगा देते हैं। जिससे संक्रमण का प्रभाव कम रहता है।

पादप नियंत्रकों का प्रयोग:

फलत बढ़ाने और अपरिपक्व फलों को गिरने से रोकने के लिये पादप नियंत्रकों का प्रयोग बहुत ही लाभदायक सिद्ध हुआ है। 80 पी पीएम जिब्रेलिक अम्ल के 2 छिड़काव अक्टूबर एवं दिसम्बर महीने के प्रारम्भ में करने से यह काफी लाभप्रद होता है। इसी प्रकार नेफ्थलीन एसीटिक एसिड (5–25 पी पी एम) का छिड़काव फलन प्रारम्भ होने पर करने से फलों के आकार एवं गुणवत्ता में वृद्धि हो जाती है। उमरान किस्म में फलों के रंग परिवर्तन के समय 400 या 500 पी पी एम इथराल के छिड़काव करने से फल दो सप्ताह पहले पक जाते हैं तथा फलों की गुणवत्ता भी बढ़ जाती है।

पुष्पन एवं फलन:

बेर में 2 से 3 वर्ष की आयु में ही फूल आना प्रारम्भ हो जाते हैं परन्तु 5–6 वर्ष की उम्र के पौधे से व्यवसायिक फलत लेना उचित होता है। फूल नई शाखा पर पत्तियों के कक्ष में आते हैं। बेर में फूल सितम्बर माह से अक्टूबर माह तक आते हैं। दक्षिण भारत में फूल मई–जून में ही आ जाते हैं। बेर के फूल नर एवं उभयलिंगी होते हैं। बेर में पर–परागण मुख्यतः मधुमक्खियों द्वारा होता है। पुष्प निकलने से लेकर फल बनने तक लगभग 25–27 दिन का समय लग जाता है।

तुड़ाई एवं उपज:

किस्मों के अनुसार उत्तर भारत में फल फरवरी से अप्रैल तक प्राप्त होते हैं। अगेती किस्में फरवरी में पकने लगती है जबकि कुछ पछेती किस्में अप्रैल तक पकती हैं। फूल खिलने से लगभग 120–150 दिन बाद फल तोड़ने योग्य हो जाते हैं। फलों को उस समय तोड़ा जाता है जब उनका रंग हरा से सुनहरा पीला या पीला पड़ने लगे। एक पूर्ण विकसित पेड़ से 100–200 कि.ग्रा. तक फलों की उपज प्राप्त हो जाती है।

तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन:

फलों को तोड़ने के बाद उनका उचित क्षेत्रीकरण आवश्यक है। खराब रोगी या कीटग्रस्त फलों को निकालकर शेष फलों को आकार तथा परिपक्वता के आधार पर अलग–अलग श्रेणियों में छांट दिया जाता है, श्रेणीकरण के बाद ही फलों को टोकरियों या पेटियों में अच्छी तरह पैक कर बाजार भेजना चाहिए।

भण्डारण:

बेर के फलों को 10–12 डिग्री सें. तापमान और 85–90 प्रतिशत सापेक्ष आर्द्रता पर अथवा पैराफीन मोम की पर्त चढ़ाकर 10–12 डिग्री सें. तापमान पर 18 दिनों तक भंडारित किया जा सकता है।

पादप सुरक्षा:

कीट: बेर में लगने वाले प्रमुख कीट निम्नलिखित हैं–

1– फल मक्खी: यह बेर का प्रमुख कीट है और इस कीट का प्रकोप फूल से फल बनने की अवस्था पर होता है। यह फल की सतह के नीचे अण्डे देती है। इससे निकलने वाला गिडार फल के अन्दर गूदा खाना प्रारम्भ कर देते हैं। फलस्वरूप पूरा फल अन्दर से सड़कर खराब हो जाता है। फल बाहर से देखने में टेंढ़ा–मेढ़ा दिखई देता है। उत्तरी भारत में लगभग 80 प्रतिशत फल इससे प्रभावित होते हैं।

नियंत्रण–

1. प्रभावित फलों को इकट्ठा कर मिट्टी में दबा देते हैं।
2. 0.2 प्रतिशत मोनोक्रोटोफास का छिड़काव फूल से फल बनते समय तथा दूसरा छिड़काव 0.05 प्रतिशत फेनथियान तथा तीसरा छिड़काव 0.1 प्रतिशत कार्बेरिल का करते हैं। छिड़काव करते समय 0.5 प्रतिशत की दर से शीरा भी मिलाते हैं। प्रत्येक छिड़काव 15 दिन के अन्तर पर करते हैं।

3. काठा, टिकाड़ी, देधिया व महरून जैसी कुछ प्रतिरोधी किस्में हैं जिसमें इसका प्रकोप रहता है।

2– छाल भक्षक कीट: यह कीट पौधे की छाल को खाकर नुकसान पहुंचाता है तथा तने में छेद बनाकर रहता है। इसके खाये हुए छाल के अवशेष गोली की तरह लड़ियों के रूप में लटकते रहते हैं। इसके आक्रमण से पौधे की बढ़वार काफी प्रभावित होती है और उपज भी कम प्राप्त होती है। इसका नियंत्रण निम्न प्रकार करते हैं।

नियंत्रण– 0.2 प्रतिशत इण्डोल्फान का छिड़काव करते हैं।

3– बेर भृंग: इस कीट का प्रौढ़ फसल को बहुत नुकसान पहुंचाता है। यह पत्तियों को खाकर छलनी कर देता है, जिससे पौधे की वृद्धि एवं उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसका प्रकोप वर्षा ऋतु (जुलाई–अगस्त) में अधिक होता है। इसके नियंत्रण हेतु मोनोक्रोटोफास 0.03 प्रतिशत घोल का छिड़काव वृक्षों पर करते हैं।

रोग:–

1– चूर्णिल आसिता: यह बेर का मुख्य रोग है। यह रोग ओडियम जिजिफी कवक से फैलता है। बेर में सबसे अधिक हानि इसी रोग से होती है। पत्ती, पुष्प एवं फलों पर सफेद चूर्ण का आवरण सा बन जाता है, वृद्धि रूक जाती है तथा फल बिना विकसित हुये गिरने लगते हैं। इसका प्रभाव अक्टूबर से दिसम्बर के बीच दिखता है। इसकी रोकथाम हेतु केरोथेन 0.1 प्रतिशत (1.0 मिलीलीटर) घोल अथवा घुलनशील गन्धक 0.2 प्रतिशत (2.0 ग्राम/लीटर) घोल का छिड़काव करते हैं। इलायची, छुआरा, नाजुक, सानौर–2, जेड जी–2, 3 एवं 4 आदि किस्म इस रोग के प्रति सहनशील पाई गई है।

2– काला धब्बा: यह आइसेरियोपसिस जिजिफी नामक कवक से होने वाला रोग है और इस रोग के प्रभाव से पत्तियों की निचली सतह पर सितम्बर–दिसम्बर में काले धब्बे बनते हैं। पत्तियां पेड़ से गिर जाती है तथा उपज प्रभावित होती है। इस रोग के नियंत्रण के लिये डाइथेन जेड–78 के 0.3 प्रतिशत घोल का छिड़काव करते हैं।

संघटन, पोषक तत्व एवं उपयोग–

बेर पोषक तत्वों से भरपूर बहुत ही महत्वपूर्ण फल है। परन्तु फलों का संगठन एवं पोषक मान किस्मों पर निर्भर करता है। इसके औसतन फल में 81–97 प्रतिशत तक गुदा होता है। पूर्ण पके फलों में 13–20 प्रतिशत कुल घुलनशील ठोस पदार्थ एवं 0.20 सें 0.08 प्रतिशत अम्लता होती है। इनमें विटामिन सी(117–125 मिली.ग्रा.) और बीटा करोटीन(31 मिली.ग्रा.) कार्बोहाइड्रेट(14 प्रतिशत), और पोषकतत्वों में कैल्शियम, फास्फोरस वा लोहा का भी अच्छा स्त्रोत है।

बेर की मुख्यतः ताजे फल के रूप में पाया जाता है, परन्तु इसमें बहुत सारे स्वादिष्ट बहुमूल्य उत्पाद बनाए जा सकते हैं। उत्तरी भारत के क्षेत्रों में बेर के फलों को सुखाया जाता है। सूखे बेर अत्यन्त स्वादिष्ट होते हैं। उन्हें किसी भी मौसम में खायाा जा सकता है। बेर के फलों से मुरब्बा, कैंडी, अचार एवं चटनी भी बनाई जाती है। रसदार किस्मों से स्क्वैश और नैक्टर आदि उत्पाद भी तैयार किये जाते हैं।